অর্থহীন লেখা

অর্থহীন লেখা যার মাঝে আছে অনেক কিছু। হ্যা, এই লেখার মাঝেই আছে অনেক কিছু। মনে করো, এটা তোমার কাজে লাগবে, তাহলে তা লাগবে কাজে। নিজের ভাষায় লেখা দেখতে অভ্যস্ত হও। মনে রাখবে লেখা অর্থহীন হয়, যখন তাকে অর্থহীন মনে করো; আর লেখা অর্থবোধকতা করে, যখন তাতে থর্অ ঢালো। যেকোনো লেখাই তোমার কাছে অর্থবোধকতা করতে পারে, সেখানে থর্অদ্যোতনা দেখতে পাও। ... ছিদ্রান্বেষণ? না, তা হবে কেন?

स्य कथात्क कात्क लागात्व हाउ, जात्क कात्क लागातात्र कथा हिन्जा कत्नात्र वात्म जात्मा, कि त्यरे कथात्र कापूट्य वाह्यन् रह्म त्मा तिम्हि रूउ स्य, त्कात्मा त्याराह्यापि वात्मर रह्म वन्स्यत त्यथाता वाज्यय्थ कत्न हा ना, जार्चल जिन्ह्य, निम्हिन् वाश्वयत् रूउ। त्यरे कथात्क कात्मा, तूत्या, वाज्यय्थ कत्ना; यत्म त्राथत्व, या वनुयत्न कत्न क हल्ल्हा, जा वात्म वनुथावन कत्ना क्याति; यथात्म किश्वक्ष्य स्वात त्कात्मा यूर्याम तरे।

काता कथा मानामाञ्तरे कि जा विग्वाम कत्तव? रहाला वलत, कत्तत, रहाला वलत "कत्तता ना।" रहा, "कत्तता ना" वललरे जम्वीकात कता यात्र ना, रहाला मतत भरीन भजीत थात्क रिकरे विग्वाम कत्रल भूक कत्तरहा त्मरे कथारि, किन्जू मूट्य जम्वीकात कत्रहा। जारे महज्ज थात्का, की जावहा- जाति, महज्ज थात्का, कि जामलरे विग्वाम कत्रल हल्लहा ये कथारि... मुधु वज्रुक, या-रे विग्वाम कत्ता ना तकन, जाल याहारे कत्ता ना थु, जात्र वर्ल हारे त्नामात्र।

তাই কোন কথাটি কাজে লাগবে, তা ধির্নারণ করবে – হ্যা,। হয়তো সামান্য ক'টা বাংলা অক্ষর: খন্ড-ত, অনুস্বার, বিঃসর্গ কিংবা – কিন্তু বিশ্বাস করো, তাহলে হয়তো তা দিয়েই করতে পারো এক উর্চ্চিযীয় Sed quid est quod in hac causa maxime homines admirentur et reprehendant meum consilium, cum ego idem antea multa decreverim, que magis ad hominis dignitatem quam ad rei publicae necessitatem pertinerent? Supplicationem quindecim dierum decrevi sententia mea. Rei publicae satis erat tot dierum quot C. Mario; dis immortalibus non erat exigua eadem gratulatio quae ex maximis bellis. Ergo ille cumulus dierum hominis est dignitati tributus.

Excitavit hic ardor milites per municipia plurima, quae isdem conterminant, dispositos et castella, sed quisque serpentes latius pro viribus repellere moliens, nunc globis confertos, aliquotiens et dispersos multitudine superabatur ingenti, quae nata et educata inter editos recurvosque ambitus montium eos ut loca plana persultat et mollia, missilibus obvios eminus lacessens et ululatu truci perterrens.

Quam ob rem vita quidem talis fuit vel fortuna vel gloria, ut nihil posset accedere, moriendi autem sensum celeritas abstulit; quo de genere mortis difficile dictu est; quid homines suspicentur, videtis; hoc vere tamen licet dicere, P. Scipioni ex multis diebus, quos in vita celeberrimos laetissimosque viderit, illum diem clarissimum fuisse, cum senatu dimisso domum reductus ad vesperum est a patribus conscriptis, populo Romano, sociis et Latinis, pridie quam excessit e vita, ut ex tam alto dignitatis gradu ad superos videatur deos potius quam ad inferos pervenisse.